ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

यशपाल का कथा -साहित्य और यथार्थबोध

Vijendra Prasad Meena

Lecturer in Hindi, Government PG College, Karauli, Rajasthan, India

सार

यशपाल (अंग्रेज़ी: Yashpal, जन्म- 3 दिसम्बर, 1903 ई., फ़िरोजपुर छावनी; मृत्यु- 26 दिसंबर, 1976) हिन्दी के यशस्वी कथाकार और निबन्ध लेखक हैं। यशपाल राजनीतिक तथा साहित्यिक, दोनों क्षेत्रों में क्रान्तिकारी हैं। उनके लिए राजनीति तथा साहित्य दोनों साधन हैं और एक ही लक्ष्य की पूर्ति में सहायक हैं। स्व. चंद्रशेखर आज़ाद की 'सोशलिस्ट रिपब्लिकन आमी' से उनका संबंध था। उन्होंने 'बम की फ़िलॉसफ़ी' नामक पेंफ़लेट लिखा था, जिसकी उन दिनों बड़ी चर्चा थी। लाहौर षड्यंत्र तथा गवर्नर की गाड़ी को उड़ाने आदि के मामलों से उनका गहरा संबंध था। बहुत समय तक वे पुलिस के हाथ नहीं आए। जब आए तो चंद्रशेखर आज़ाद शहीद हो चुके थे। तब वे इलाहाबाद में पकड़े गए। आठ वर्ष की सज़ा हुई। 1937 में कांग्रेस ने जब सरकार से सहयोग किया और प्रांतों में कांग्रेस सरकार बनी तो यशपाल भी रिहा हुए। जेल ही में उनकी शादी प्रकाश जी से हो गई थी, जो स्वयं क्रांतिकारिणी रही थीं। अथवा यूँ कहना चाहिए कि प्रकाश जी ने जेल के अधिकारियों से प्रार्थना कर श्री यशपाल से शादी कर ली थी। अभी यशपाल की सज़ा काफ़ी शेष थी, पर बीमार हो जाने और डाक्टरों के यक्ष्मा घोषित करने से उन्हें छोड़ दिया गया। पंजाब के किस प्रदेश में उन्होंने जन्म लिया, कहाँ पले, पढ़े? क्रांतिकारी बनने से पहले क्या करते थे? क्रांतिकारी दल में उनका क्या स्थान था? ये और उनके अतीत की बीसियों बातों का मुझे कोई ज्ञान नहीं। उनका अतीत काफ़ी घटनामय रहा है, भविष्य कैसा रहेगा, इसके संबंध में भी मैं कुछ नहीं कह सकता। क्योंकि पुरुष का भाग्य जब देवता नहीं जानते तो मैं मनुष्य क्या जानूँगा कुछ वर्षों के संपर्क में उनकी जो झलक मैंने व्यक्तिगत रूप से देखी वही मेरी निधि है और उसी की झलक में दूसरों को दिखा सकता हूँ।

यशपाल को पहली बार हिंदी साहित्य सम्मेलन के शिमला अधिवेशन में देखा और इस बात के अतिरिक्त कि मैंने क्रांतिकारी यशपाल को देख लिया है, अन्य किसी बात का प्रभाव मेरे मन पर नहीं रहा। बात यह थी कि सन् 1628-29 की सनसनियों का ज़माना बीत चुका था, भगतसिंह को और राजगुरु को फाँसी लगे वर्षों हो गए थे। कांग्रेस असहयोग की नीति को छोड़कर सरकार के साथ सहयोग कर रही थी इसलिए यशपाल उस ज़माने की राजनीति में महत्व खो बैठे थे। यदि मुझे कहीं उन्हें उस ज़माने में देखने का अवसर मिलता जब देश भर में हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' की सरगर्मियों के चर्चे थे तो मुझे विश्वास है कि न केवल यशपाल को देखने की प्रबल उत्कंठा मेरे मन में होती, वरन् उस भेंट का गहरा प्रभाव भी मेरे मन पर रहता। 1938 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर पधारने वाले प्रतिष्ठित सज्जनों में से वे भी एक थे और उनकी अपेक्षा कई अन्य व्यक्तित्व मेरे लिए अधिक महत्व रखते थे, इसलिए उस भेंट को मैंने महत्व नहीं दिया।

परिचय

हिन्दी के यशस्वी कथाकार और निबन्धकार यशपाल का जन्म 3 दिसम्बर, 1903 ई. में फ़िरोजपुर छावनी में हुआ था। इनके पूर्वज कांगड़ा ज़िले के निवासी थे और इनके पिता 'हीरालाल' को विरासत के रूप में दो-चार सौ गज़ तथा एक कच्चे मकान के अतिरिक्त और कुछ नहीं प्राप्त हुआ था। इनकी माँ प्रेमदेवी ने उन्हें आर्य समाज का तेजस्वी प्रचारक बनाने की दृष्टि से शिक्षार्थ 'गुरुकुल कांगड़ी' भेज दिया। गुरुकुल के राष्ट्रीय वातावरण में बालक यशपाल के मन में विदेशी शासन के प्रति विरोध की भावना भर गयी।

लाहौर के 'नेशनल कॉलेज' में भर्ती हो जाने पर इनका परिचय भगतसिंह और सुखदेव से हो गया। वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन की ओर आकृष्ट हुए। सन् 1921 ई. के बाद तो ये सशस्त्र क्रान्ति के आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने लगे। सन् 1929 ई. में वाइसराय की गाड़ी के नीचे बम रखने के लिए घटनास्थल पर उनको भी जाना पड़ा, बाद में कुछ ग़लतफ़हमी के कारण वे अपने दल की ही गोली के शिकार होते-होते बचे।[1]

दिल्ली के पंडित चंद्रशेखर शास्त्री सुबह शाम यशपाल के पीछे पड़े रहते थे। वे 'हिटलर महान' और 'मुसोलिनी महान' का सृजन करने के बाद उन दिनों भारतीय क्रांतिकारियों के इतिहास का निर्माण कर रहे थे। लिखे मसौदे का पुलिंदा बग़ल में दबाए, वे सुबह-सुबह यशपाल को घेर लेते थे। मेरा दुर्भाग्य कि तब मुझे शास्त्री जी की विद्वता की अपेक्षा उनकी पतली दुबली, सूखे बाँस-सी लंबी काया, इस पर भी अपने शक्ति संपन्न होने का दंभ, उनका 'हिस्ट्री' को 'हिश्ट्री' कहना, अपने 'हिश्ट्री' ज्ञान का डंका बारहों घंटे पीटना

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

और अपने सामने श्री जदुनाथ सरकार से लेकर श्री जयचंद विद्यालंकार तक सभी इतिहासज्ञों को हेय समझना ज़ियादा अच्छा लगता था। आज किसी ऐसे आदमी से मिलूँ तो मेरे मन में दया उपज आए और मैं चुप रहूँ, पर तब मुझे उन्हें बनाना भाता था। फक्कड़पने के दिन थे, क्या कहते और क्या बकते हैं, कभी इस पर ध्यान न दिया था चन्द्रशेखर आज़ाद के शहीद हो जाने पर वे 'हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र' के कमाण्डर नियुक्त हुए। इसी समय दिल्ली और लाहौर में दिल्ली तथा लाहौर षड्यंत्र के मुक़दमें चलते रहे। यशपाल इन मुक़दमों के प्रधान अभियुक्तों में थे। पर ये फ़रार थे और पुलिस के हाथ में नहीं आ पाये थे। 1932 ई. में पुलिस से मुठभेड़ हो जाने पर गोलियों का भरपूर आदान-प्रदान करने के अनन्तर, ये गिरफ़्तार हो गये। उन्हें चौदह वर्ष की सख़्त सज़ा हुई। सन् 1938 ई. में उत्तर प्रदेश में जब कांग्रेस मंत्रिमण्डल बना तो अन्य राजनीतिक बन्दियों के साथ इनको भी मुक्त कर दिया गया।

जेल से मुक्त होने पर इन्होंने 'विप्लव' मासिक निकाला, जो थोड़े ही दिनों में काफ़ी लोकप्रिय हो गया। 1941 ई. में इनके गिरफ़्तार हो जाने पर 'विप्लव' बन्द हो गया, किन्तु अपनी विचारधारा के प्रचार में इन्होंने विप्लव का भरपूर प्रयोग किया। विभिन्न ज़िलों में उन्हें पढ़ने-लिखने का जो अवकाश मिला था, उसमें उन्होंने देश-विदेश के बहुत से लेखकों का मनोयोगपूर्ण अध्ययन किया। 'पिंजरे की उड़ान' और 'वो दुनियाँ' की कहानियाँ प्राय: जेल में ही लिखी गयी।

कहानी पंजाब के पहाड़ी प्रदेश की थी। चंद सतरें पढ़ने पर फिर ख़याल आया कि शायद लाहौर के यश जी की है, पर ज्यों-ज्यों मैं कहानी पढ़ता गया, महसूस करता गया कि यह उन दोनों में से किसी की भी नहीं हो सकी। कहानी के अंत पर पहुँच कर यह विश्वास और भी पक्का हो गया। दोनों की प्रतिभा से मैं भिज्ञ था। दोनों में से कोई भी ऐसी सुंदर कहानी लिख सकता है, इसकी कोई संभावना न थी। तब सहसा ख़याल आया कि कहीं यह क्रांतिकारी यशपाल की कहानी न हो? किसी से सुना था कि वे भी कहानी लिखते हैं और लखनऊ से पत्र निकालने जा रहे हैं। कुछ दिन बाद मैंने अनारकली के चौराहे में फ़ज़ल के स्टाल पर 'विप्लव' के दर्शन भी किए। ख़रीदने की शक्ति तब थी नहीं, 'विप्लव' को देख कर मुझे पूरा विश्वास हो गया कि कहानी क्रांतिकारी यशपाल ही की है। इस विश्वास के साथ शिमला की वह भेंट विस्मृति के गर्त से निकल कर सामने आ गई।

यदि मैं लाहौर रहता। 'विप्लव' ख़रीद कर अथवा कहीं से लेकर उसमें यशपाल की चीज़ें पढ़ता तो मैं निश्चय ही उस संक्षिप्त परिचय को घनिष्ठ बनाने का प्रयास करता। पर मैं प्रीतनगर चला गया। प्रीतनगर नाम से नगर था, पर उसमें उस समय केवल 19 कोठियाँ बनी थीं और लाहौर छोड़ अटारी की सड़क से भी दस मील दूर मध्य पंजाब के देहात में बन रहा था। वहाँ जाकर मैं साहित्यिक वातावरण से एक दम दूर हो गया।

बहुत दिन बाद, याद नहीं, प्रीतनगर में, लाहौर अथवा दिल्ली में, मैंने यशपाल की एक और कहानी पढ़ी—'ज्ञानदान' और यद्यपि न मुझे कहानी के आधारभूत विचार में नवीनता लगी और न 'परसराम' सा प्यारापन, पर उससे यशपाल के कहानीकार की शक्तिमत्ता का ज़रूर आभास मिला। उर्दू के प्रसिद्ध कहानीकार मंटो की भाँति यशपाल का कथाकार भी अपने पाठकों को चौंका देना पसंद करता है। मंटो की इस 'शॉक टेकनिक' का उल्लेख करते हुए उर्दू की एक दूसरी प्रसिद्ध कथाकार 'इस्मत' ने लिखा है कि मंटो को, बातचीत हो अथवा साहित्य, अपने सुनने और पढ़ने वालों को चौंकाना अधिक रुचिकर है। यदि लोग साफ़-सुथरे कपड़े पहने बैठे हों तो मंटो वहाँ इस लिए शरीर पर मिट्टी मले पहुँच जाएगा कि लोग उसे देख कर चौंक पड़ें। यशपाल के संबंध में यह बात कही जा सकती है या नहीं, यह मैं नहीं जानता, हालाँकि इसमें संदेह नहीं कि मंटो ही की तरह यशपाल की कई कहानियों में यह चौंका देने वाला गुण वर्तमान है। 'शानदान' के बाद 'प्रतिष्ठा का बोझ' और 'धर्मरक्षा' इसके उदाहरण हैं, पर यशपाल केवल चौंकाने के लिए नहीं चौंकाते, उन्होंने अपने नए कहानी संग्रह 'फूलो का कुर्ता' की प्रथम कहानी अथवा पुस्तक का भूमिका में अपनी इन कहानियों के उद्देश्य का स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है कि बदली स्थिति में भी परंपरागत संस्कार से ही नैतिकता और लज्जा की रक्षा करने के प्रयत्न में क्या से क्या हुआ जा रहा है, समाज अपने आदर्शों को ढकने के प्रयास में कितना उघड़ता चला जा रहा है, प्रगतिशील लेखक यही बनाना चाहता है और समाज को उसकी बातें बड़ी उघड़ी-उघड़ी लगती है।

जो भी हो, इन कहानियों के मुक़ाबले में कहीं सुंदर कहानियाँ यशपाल ने लिखी हैं, जिनकी आर्द्रता और संवेदना, जिनके आधारभूत विचारों की यथार्थता और उस यथार्थता को कहानी में रखने के ढंग की नवीनता अपूर्व है। दुर्भाग्य से यशपाल कहानी का नाम रखने में सतर्कता से काम नहीं लेते, इसलिए इस समय जब कई कहानियों के नाम याद आ रहे हैं, अकसर वे भूल गए हैं, केवल उनकी स्मृति शेष है। 'पराया मुख', 'राज', 'उसकी जीत', 'गडेरी', 'धर्म युद्ध' और 'ज़िम्मेदारी' तो बहुत ही सुंदर बन पड़ी है। 'सन्यास', 'दो मुँह की बात', सोमा का साहस', 'दूसरी नाक' आदि कितनी ही कहानियाँ हैं, जो दोबारा पढ़ने पर भी उतना ही आनंद देती हैं।[2]

यशपाल में लिखने की प्रवृत्ति विद्यार्थी काल से ही थी, पर उनके क्रान्तिकारी जीवन ने उन्हें अनुभव सम्बद्ध किया, अनेकानेक संघर्षों से जूझने का बल दिया। राजनीतिक तथा साहित्यिक, दोनों क्षेत्रों में वे क्रान्तिकारी हैं। उनके लिए राजनीति तथा साहित्य दोनों साधन

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

हैं और एक ही लक्ष्य की पूर्ति में सहायक हैं। साहित्य के माध्यम से उन्होंने वैचारिक क्रान्ति की भूमिका तैयार करने का प्रयास किया है। विचारों से वे काफ़ी दूर तक मार्क्सवादी हैं, पर कट्टरता से मुक्त होने के कारण इससे उनकी साहित्यिकता को प्राय: क्षति नहीं पहुँची है, उससे वे लाभान्वित ही हुए हैं।

विचार-विमर्श

यशपाल पहले-पहल कहानीकार के रूप में हिन्दी जगत् में आये। अब तक उनके लगभग सोलह 'कहानी संग्रह' प्रकाशित हो चुके हैं। यशपाल मुख्यत: मध्यमवर्गीय जीवन के कलाकार हैं और इस वर्ग से सम्बद्ध उनकी कहानियाँ बहुत ही मार्मिक बन पड़ीं हैं। मध्यवर्ग की असंगतियों, कमज़ोरियों, विरोधाभासों, रूढ़ियों आदि पर इतना प्रबल कशाघात करने वाला कोई दूसरा कहानीकार नहीं है। दो विरोधी परिस्थितियों का वैषम्य प्रदर्शित कर व्यंग्य की सर्जना उनकी प्रमुख विशेषता है। यथार्थ जीवन की नवीन प्रसंगोदभावना द्वारा वे अपनी कहानियों को और भी प्रभावशाली बना देते हैं।

मध्यवर्ग अपनी ही रूढ़ियों में जकड़ा हुआ कितना दयनीय हो जाता है, इसका अच्छा ख़ासा उदाहरण 'चार आने' है। झूठी और कृत्रिम प्रतिष्ठा के बोझ को ढोते-ढोते यह वर्ग अपने दैन्य और विवशता में उजागर हो उठा है। 'गवाही' और 'सोमा का साहस' में समाज के ग़लीज़, नक़ाब और कृत्रिमता की तस्वीरें खींची गयीं हैं। इस वर्ग के वैमनस्य में निम्न वर्ग को रखकर उसके अंहकार और अमानवीय व्यवहार को बहुत ही मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करने में यशपाल ख़ूब कुशल हैं। 'एक राज़' में मालकिन और नौकर की मनोवृत्तियों की विषमताओं को इस तरह से उभारा गया है कि पाठक नौकर की सहानुभूति में तिलमिला उठता है। 'गुडबाई दर्द दिल' में रिक्शेवाले के प्रति की गयी अमानुषिकता पाठकों के मन में गहरी कचोट पैदा करती है। इस प्रकार की विषमता को अंकित करने के लिए यशपाल ने प्राय: उच्च मध्यवर्गीय व्यक्तियों को सामने रखा है, क्योंकि सामान्य मध्यवर्गीय व्यक्ति तो अपनी उलझनों से ही ख़ाली नहीं हो पाता।[3]

यशपाल के व्यंग्य का तीखा रूप '80/100', 'ज्ञानदान' आदि में देखा जा सकता है। सामान्यत: कहा जाता है कि उन्होंने अपनी कथा के लिए रोटी और सेक्स की समस्याएँ चुनी हैं। यशपाल की कहानियों में कोई न कोई जीवन्त समस्या है, पर वे पूर्णत: कलात्मक आवरण में व्यक्त हुई हैं। जहाँ उनकी समस्या को कलात्मक आच्छादन नहीं मिल सका, वहाँ कहानी का कहानीपन संदिग्ध हो गया है।

उपन्यास में यशपाल का दृष्टिकोण और भी अधिक अच्छी तरह उभर सका है। उनका पहला उपन्यास 'दादा कामरेड' क्रान्तिकारी जीवन का चित्रण करते हुए मज़दूरों के संघठन को राष्ट्रोद्धार का अधिक संगत उपाय बतलाया है। 'देश द्रोही' कला की दृष्टि से 'दादा कामरेड' से कई क़दम आगे है। इस उपन्यास में गांधीवाद तथा कांग्रेस की तीव्र आलोचना करते हुए लेखक ने समाजवादी व्यवस्था का आग्रह किया है। 'दिव्या' यशपाल के श्रेष्ठ उपन्यासों में एक से है। इस उपन्यास में युग-युग की उस दलित-पीड़ित नारी की करुण कथा है, जो अनेकानेक संघर्षों से गुज़रती हुई अपना स्वस्थ मार्ग पहचान लेती है। 'मनुष्य के रूप' में परिस्थितियों के घात-प्रतिघात से मनुष्य के बदलते हुए रूपों को प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। 'अमिता' उपन्यास 'दिव्या' की भाँति ऐतिहासिक है।

कुछ समय पहले ही यशपाल का अत्यन्त विशिष्ट उपन्यास 'झूठा-सच' प्रकाशित हुआ है। विभाजन के समय देश में जो भीषण रक्तपात और अव्यवस्था उत्पन्न हुई, उसके व्यापक फलक पर झूठ-सच का रंगीन चित्र खींचा गया है। इसके दो भाग हैं- वतन और देश तथा देश का भविष्य। प्रथम भाग में विभाजन के फलस्वरूप लोगों के वतन छूटने और द्वितीय भाग में बहुत सी समस्याओं के समाधान का चित्रण हुआ है। देश के समसामयिक वातावरण को यथासम्भव ऐतिहासिक यथार्थ के रूप में रखा गया है। विविध समस्याओं के साथ-साथ इस उपन्यास में जिन नये नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की गयी है, वे रूढ़िग्रस्त विचारों को प्रबल झटका देते हैं।

एक सफल कथाकार होने के साथ-साथ यशपाल अच्छे व्यक्तित्व-व्यंजक निबन्धकार भी हैं। वे अपने दृष्टिकोण के आधार पर सड़ी-गली रूढ़ियों, ह्रासोन्मुखी, प्रवृत्तियों पर जमकर प्रहार करते हैं। उन्होंने सरस तथा व्यंग्य-विनोद, गर्भ संस्मरण और रेखाचित्र भी लिखे हैं। 'न्याय का संघर्ष', 'देखा सोचा, समझा', 'सिंहावलोकन' (तीन भाग) आदि में उनके निबन्ध, संस्मरण और रेखाचित्र संग्रहीत हैं।

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

कृतियाँ

कहानी संग्रह

कहानी	सन
ज्ञानदान	1944 ई.
अभिशप्त	1944 ई.
तर्क का तूफ़ान	1943 ई.
भस्मावृत चिनगारी	1946 ई.
वो दुनिया	1941 ई.
फूलों का कुर्ता	1949 ई.
धर्मयुद्ध	1950 ई.
उत्तराधिकारी	1951 ई.
चित्र का शीर्षक	1952 ई.

उपन्यास संग्रह

उपन्यास	सन
दादा कामरेड	1941 ई.
देशद्रोही	1943 ई.
पार्टी कामरेड	1947 ई.
दिव्या	1945 ई.
मनुष्य के रूप	1949 ई.
अमिता	1956 ई.
झूठा सच	1958-1959 ई.
अप्सरा का शाप	2010 ई.

निबन्ध संग्रह

निबन्ध	सन
न्याय का संघर्ष	1940 ई.
चक्कर क्लब	1942 ई.
बात-बात में बात	1950 ई.
देखा, सोचा, समझा	1951 ई.
सिंहावलोकन	-

संस्मरण और अन्य

संस्मरण के तीन भाग हैं :

- पहला भाग सन् 1951
- दूसरा भाग सन् 1952
- तीसरा भाग सन् 1955 ई.
- 'गांधीवाद की शव-परीक्षा' (1941 ई.)

इनकी साहित्य सेवा तथा प्रतिभा से प्रभावित होकर रीवा सरकार ने 'देव पुरस्कार' (1955), सोवियत लैंड सूचना विभाग ने 'सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार' (1970), हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने 'मंगला प्रसाद पारितोषिक' (1971) तथा भारत सरकार ने 'पद्म भूषण' की उपाधि प्रदान कर इनको सम्मानित किया है। यशपाल हिन्दी के अतिशय शक्तिशाली तथा प्राणवान साहित्यकार थे। अपने दृष्टिकोण को व्यक्त करने के लिए उन्होंने साहित्य का माध्यम अपनाया था। लेकिन उनका साहित्य-शिल्प इतना ज़ोरदार है कि विचारों की अभिव्यक्ति में उनकी साहत्यिकता कहीं पर भी क्षीण नहीं हो पाई है। यशपाल जी का सन् 26 दिसंबर, 1976 ई. में निधन हो गया। [4]

परिणाम

एक रात बाज़ार की काफ़ी सैर करके हम लौटे तो चाँद निकल आया था। यशपाल ने तब देवदार होटल के बहुत ऊपर, नीचे से दिखाई पड़ने वाली कैंटोन्मेंट के देवदारों की पंक्ति को देखने का प्रस्ताव किया। साढ़े नौ बज चुके थे। साधारणतः उस समय मुझे सो जाना चाहिए। लेकिन यशपाल ने साथ घसीट लिया। भरी चाँदनी में गगनचुंबी देवदारों की छाया में कैंटोन्मेंट की एकाकी सड़कों पर घूमने में जो आनंद आया वह अकथ्य है। ऊपर जाकर हम गिरजे के एक ओर बैठ गए, चाँदनी में गिरजा किसी खोए हुए स्वप्न-महल-सा दिखाई दे रहा था और नीचे घाटी और देवदार के पेड़, हलकी-हलकी हवा की सरसराहट और चाँद... मैं उतनी रात गए शायद कभी घर से न निकलता। कैंटोन्मेंट की उन सड़कों, वीथियों और देवदार की उन पंक्तियों में चाँदनी का जो दृश्य मैंने देखा उसके लिए मैं यशपाल का आभारी हूँ।

यशपाल प्रायः दो एक बैठकों में ही चीज़ लिख लेते हैं, पर वे लिखे को वेद-वाक्य नहीं समझते। मेरी तरह बार-बार काँट-छाँट भी नहीं करते, पर जैनेंद्र की तरह उसे अंतिम भी नहीं समझते। दूसरी बार वे लिखी चीज़ को देखते हैं तो उसे काट-छाँट भी देते हैं।

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

लोगों को यशपाल के अहं से शिकायत है। मैं ने पंचगनी में ही प्रयाग के प्रगतिशील लेखक सम्मेलन (1946) के संबंध में 'रहबर'[4] का रिपोर्ताज़ पढ़ा था, जिसमें उन्होंने यशपाल के अहं की ओर इशारा किया है कि यशपाल को अपने सिवा कोई कथा लेखक अच्छा नहीं लगता। न जाने क्यों, मैं अपने में इस प्रकार के अहं का सर्वथा अभाव पाता हूँ। कृष्ण, बेदी, मंटो, बलवंत सिंह, जैनेंद्र, अज्ञेय यशपाल—विभिन्न कथाकरों की लेखनी का रसास्वादन कर लेता हूँ। इनमें से प्रत्येक लेखक की कई कहानियाँ हैं जो मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। हीन-भाव के कारण ऐसा हो, यह बात नहीं। मैं न अपने को इनमें से किसी से हीन समझता हूँ न किसी की शैली का असर लेता हूँ, लेकिन इसके बावबूद जब कोई चीज़ मुझे भा जाती है तो वह चाहे शत्रु की ही क्यों न हो, उस का उल्लेख किए बिना मुझसे रहा नहीं जाता। अल्मोड़ा में यशपाल मेरे यहाँ ठहरे तो मुझे 'रहबर' के लेख की याद आ गई। मैं ने तय कर लिया कि मैं अपनी कहानियों के बारे में उनसे बिलकुल बात न करूँगा। लेकिन कौशल्या ने तब प्रकाशन का काम प्रारंभ कर दिया था और पहली पुस्तक 'पिंजरा' छापी थी, जिसका पहला संस्करण 'सामयिक साहित्य सदन' लाहौर से हुआ था और कई वर्षों से अप्राप्य था। उस पुस्तक की दो प्रतियाँ कौशल्या ने मुझे अल्मोड़ा भेजी थीं। यशपाल ने 'पिंजरा' देखकर उसे पढ़ने की इच्छा प्रकट की। यह भी कहा कि दुर्भाग्य से उन्होंने मेरी कोई भी कहानी नहीं पढ़ी। मैंने 'पिंजरा' उन्हें भेंट किया और कहा कि यद्यपि इसमें मेरी दस-बारह साल पुरानी कहानियाँ संकलित है, पर कुछ बहुत अच्छी है। यशपाल ने पुस्तक सधन्यवाद ले ली और कहा कि वे रात को सोते समय कुछ कहानियाँ पढ़ेंगे।

यशपाल पुस्तक अपने कमरे में रख कर दुर्गा भाभी के साथ सैर को चले गए तो मैंने कौशल्या को पत्र लिखा कि वह 'भारती भंडार' से मेरा उपन्यास 'गिरती दीवारें' और मेरे सांकेतिक नाटकों का संग्रह 'चरवाहे' ख़रीद कर भेज दे, क्योंकि मैं दोनों पुस्तकें यशपाल को भेंट करना चाहता हूँ।

पुस्तकें दस-बारह दिन बाद आ गईं, पर मैं उन्हें भेंट न कर सका। चुपचाप उन्हें अपने पास रखे रहा और वापसी पर जब रानीखेत रुका और वहाँ रोडवेज़ के श्री जोशी से भेंट हुई और उन्होंने 'गिरती दीवारें' पढ़ने की बड़ी इच्छा प्रगट की तो मैंने दोनों पुस्तकें उन्हें बेच दीं।[5]

हुआ यह कि जो पुस्तक मैंने यशपाल को भेंट की थी, वह उसी तरह बे-पढ़े मुझे एक कोने में पड़ी मिली। यशपाल ने उसमें शायद एक दो कहानियाँ पढ़ी थीं, फिर शायद मन ही मन अपनी कहानियों से उनकी तुलना की और उन्हें सेंटीमेंटल कह कर एक ओर रख दिया। 'पिंजरा' और 'डाची'—उस संग्रह की दो कहानियाँ बड़ी लोकप्रिय हुई थीं, पर यशपाल ने उनके बारे में भी कोई राय न दी। इस बात के बावजूद शायद मैं उन्हें 'गिरती दीवारें' भेंट करता, लेकिन बातों-बातों में उन्होंने हिंदी के प्रत्येक उपन्यास की आलोचना की–'शेखर', 'संन्यासी', 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'चित्रलेखा'...उन्हें कोई भी उपन्यास पसंद न था। 'चित्रलेखा' को मैं भगवती बाबू का उत्कृष्ट उपन्यास मानता हूँ। यशपाल ने मुझे बताया कि 'चित्रलेखा' अनातोले फ्रांस के उपन्यास 'थाया' (या थाइस–जो भी उच्चारण हो) का चरचा है। उन्होंने मुझे 'थाया' पढ़ने को भी दिया। पढ़कर 'चित्रलेखा' का महत्व मेरी आँखों में और भी बढ़ गया। क्योंकि आधार-भूत विचार में चाहे थोड़ी बहुत समानता हो, जिसे भगवती बाबू ने भूमिका में मान भी लिया है, वरना दोनों उपन्यासों में बड़ा भारी अंतर है और मुझे 'चित्रलेखा', 'थाया' से बेहतर लगा। कौशल्या ने 'गिरती दीवारें' और 'चरवाहे' लीडर प्रेस से ख़रीद कर भिजवाई थी, क्योंकि मैं लेखक की छह प्रतियाँ (जो भारती भंडार वाले बड़ी कृपापूर्वक देते हैं) कब की बाँट चुका था, इसलिए पुस्तकें ख़रीद कर ऐसे साहित्यकार को देना जो उन्हें बिना पढ़े एक कोने में फेंक दे मुझे गवारा न हुआ। और मैं ने उन्हें बेच दिया।

[बाद में जब यशपाल से मेरी काफ़ी बेतकल्लुफ़ी हो गई। मैं कई बार लखनऊ गया और वे इलाहाबाद मेरे यहाँ आकर रहे और मैंने बड़ा मज़ा लेकर यह बात बताई तो उन्होंने बड़ा बुरा माना और कौशल्या से ज़बरदस्ती 'गिरती दीवारें' लेकर उसे पढ़ा।]

सो अहं तो यशपाल में है। लेकिन पहली बात तो यह है कि जैनेंद्र से लेकर सत्येंद्र (शरत) तक अहं हिंदी के हर लेखक में है। हिंदी का प्रत्येक लेखक कदाचित परंपरा के कारण थर्ड-रेट सी चीज़ लिख कर भी अपने आपको सृष्टा मान लेता है...आप आज कल हिंदी को क्या दे रहे हैं? मैंने हिंदी को तीन नई कहानियाँ दी हैं! आदि वाक्य साधारणतः सुनने में आते हैं। फिर अपने बराबर किसी दूसरे को न समझना लेखकों की साधारण दुर्बलता है। स्वयं 'रहबर' साहब, जिन्हें यशपाल के अहं से शिकायत है, अपने सामने किसी दूसरे को नहीं गिनते। हिंदी के 'महान' लेखकों को मैंने अनायास अपने से छोटे लेखकों का अपमान करते देखा है।

कभी-कभी मुझे आश्चर्य होता है कि लेखक, जो अपने आपको मनोविज्ञान के पंडित समझते हैं, क्या इस ज़रा से तथ्य को नहीं समझ सकते कि दूसरे के पास भी दिल है और उसमें ख़ुदी की नन्हीं सी किंदील टिमटिमाती है और वह किंदील तिलमिला कर कभी ज्वाला बन सकती है, जिसके प्रकाश से स्वयं उनकी आँखें चुँधिया जाए! दूसरों से अपने अहं की रक्षा चाहते हुए वे क्यों दूसरे के अहं की रक्षा नहीं कर सकते? मैंने ऐसे महान हिंदी लेखकों को देखा है जो बड़े नेताओं, सेठों अथवा अफ़सरों के दरबारों में और ही होते हैं और

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

अपने साथी लेखकों तथा पाठकों के सामने और! यशपाल को मैंने ऐसा नहीं पाया।

स्नॉब (Snob) के लिए वे स्नॉब अवश्य है, पर अपने साधारण पाठक तथा साधारण लेखक के लिए सरल हैं। उनका अहं अपनी कला के प्रति उनके विश्वास का प्रतीक है और उनका अक्खड़पन दूसरों के अहं से अपनी रक्षा करने का साधन! पर अपनी कला में विश्वास रखने के साथ ही साथ यह कहीं अच्छा होता यदि वे अपने अन्य साथियों की कला का भी रसास्वादन कर सकते। लेकिन यह हानि उनके साथियों की नहीं, उनकी अपनी है।[6]

यशपाल स्नॉब के साथ स्नॉब हैं। और उनकी स्नॉबरी के कई क़िस्से मुझे याद हैं।

भुवनेश्वर अपने ज़माने में ख़ासे स्नॉब रहे हैं। एक बार वे यशपाल से हज़रतगंज में मिल गये। यशपाल सिगरेट ख़रीद रहे थे। 'बोर्नियो' भुवनेश्वर ने आश्चर्य प्रकट करते हुए और आँखें चढ़ाते हुए कहा, 'हूँ–!' 'हाँ–!'
"कम्यूनिस्ट और हिंदी लेखक और बोर्नियो के सिगरेट!" भुवनेश्वर ने अँग्रेज़ी में कहा, "आई-सी-एस वाले भी इतने मँहगे सिगरेट नहीं पी पाते।"
"आई-सी-एस वाले किसी के नौकर होते हैं, जबकि मैं मालिक हूँ।" यशपाल ने उसी ऊँचाई से उत्तर दिया।

कांतिचंद्र सोनरिक्सा नए-नए डिप्टी कलक्टर हुए थे। सिर पर टेढ़ी टोपी और हाथ में 555 का डिब्बा लिए घूमा करते थे। एक दिन वे यशपाल से 'कॉफ़ी हाउस' में मिल गए। और उन्होंने डिब्बा आगे बढ़ा दिया। Have a Smoke
नहीं मैं यह नहीं पीता।
It is 555.
मैं 555 नहीं पीता, यशपाल ने कहा, और जेब से पाउच निकाल कर वे अपना सिगरेट बनाने लगे।
एक बार रामविलास शर्मा और अज्ञेय इकट्ठे यशपाल से मिलने आए। रामविलास ने कहा, "देखो यार मैं सुबह से इनके साथ हूँ, पर यह एक शब्द भी नहीं बोले। तुम इन्हें बुलवा दो तो जाने।
Do you think, I am so much in love with his Voice." -यशपाल ने उत्तर दिया।
और ऐसी बीसियों बातें हैं। लेकिन यह भी तय है कि इसका पता उनके साथ काफ़ी दिन तक रहने के बाद ही लगता है कि साधारण लोगों के साथ वे कभी स्नॉबरी से काम नहीं लेते और बड़ी, सरलता से उनके साथ घुल-मिल जाते हैं।

यशपाल अधिक बातचीत नहीं करते। इधर तो गले की बीमारी के कारण कम बोलते हैं, लेकिन उनकी बातचीत काफ़ी रोचक और व्यंग्यात्मक होती है। विनोदप्रियता उनमें बहुत है और जिसे अँग्रेज़ी में टख़ना खींचना कहते हैं, वह उनके स्वभाव का आवश्यक अंग है। कई बार दूसरा व्यक्ति, यदि उसमें मज़ाक़ सहने की शक्ति न हो तो तिलमिला भी जाता है।

यशपाल जेल से छुटे थे। एक बड़े कवि उनके मित्र हैं। उनके घर दो दिन के लिए गए तो मित्र ने अपनी नई कविताएँ सुनाईं। कवि-पत्नी ज़रा अँग्रेज़ी-दाँ हैं और अँग्रेज़ी अदब-आदाब में विश्वास रखती हैं, कुछ वाक्य स्वभाववश बोलती रहती हैं। पति ने कविताएँ समाप्त की तो पत्नी चहकी, Are'nt they lovely!
यशपाल चुप रहे। कविताएँ उन्हें बहुत अच्छी न लगी थी। उत्तर की न उन्होंने वांछा की न यशपाल ने दिया।
खाने की मेज़ पर हेरिंग्ज (छोटी मछली) का डिब्बा खुला। यशपाल को प्लेट देते हुए कवि-पत्नी ने फिर वही वाक्य दोहराया, Arent' they lovely?
Just like your husbands poems!' यशपाल ने उत्तर दिया।

पढ़ी-लिखी लड़कियों में एक बार उन्होंने कहा, मिरचें और पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ एक जैसी होती है। आदमी पाना भी चाहता है और सी-सी भी करता है।

एक बार उनके एक मित्र की पत्नी अपने पति के साथ लखनऊ आईं। बरसात के दिन थे। बाहर गईं तो भीग गई। आकर उन्होंने रानी (मिसेज़ यशपाल) की साड़ी पहनी और ड्राइंग रूम में आ बैठीं। क़द-बुत से वे मिसेज़ यशपाल सरीखी हैं। उनकी साड़ी पहने वे सुस्ता रही थीं कि यशपाल कहीं बाहर से आए। वे चहकी।
Am I not looking like Rani!
Am I not looking like Raja? यशपाल ने कहा। और वे चिल्लाईं—
Oh, you are horrible![5]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

लेकिन इस सब अहं और स्नॉबरी के बावजूद वे कितने बड़े तमाशाई हैं, इसे वे ही लोग जान सकते हैं, जिन्होंने उनके मुँह से यह सुना हो कि उन्होंने मिश्र बंधुओं को कैसे अपनी कहानी सुनाई।

यशपाल जीवन को जीने में विश्वास रखते हैं। खाने-पीने और जीवन को ढंग से जीने में उनका विश्वास है। बढ़िया सूट-बूट के साथ वे नव्वे-सौ का शू पहनना चाहते हैं, रेफ्रिजिएटर में रखे पेय का आनंद उठाना चाहते हैं और अधिक से अधिक ख़र्च करना चाहते हैं। इसका एक कारण तो वह ग़रीबी और अभाव हो सकता है जिसमें उनका बचपन और जवानी का अधिकांश समय बीता और दूसरा नास्तिकता तथा आवागमन के दर्शन में उनका अविश्वास! वे इसी जीवन में विश्वास रखते हैं और दूसरे जीवन की चिंता में इसे बिगाड़ने के बदले इसे ही बनाना चाहते हैं। यह बात कि कौसानी में जिस जगह बैठ कर महात्मा गाँधी को अनासक्तियोग लिखने का विचार आया वहीं यशपाल को आसक्तियोग लिखने की सूझी, जहाँ उनके प्रचंड अहं की ओर संकेत करती है, वहाँ उस अंतर की ओर भी इंगित करती है जो महात्मा गाँधी और यशपाल की धारणाओं में है।

निष्कर्ष

उत्तरोत्तर अच्छा खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने और बेहतर जीवन बिताने की वांछा रहने के बावजूद यशपाल के स्वभाव में अभिजात-वर्गीय अहं नहीं। उनका अहं उस लेखक का अहं नहीं जो रिक्शा में बैठे हुए नाक पर रूमाल रख ले कि कहीं साइकिल चलाते मज़दूर के पसीने की गंध हवा से उड़ कर उसके नथनों को न छू ले या अपने गाँव के किसी ज़रूरतमंद छात्र को कई बार की मुलाक़ात के बावजूद पहचानने से इनकार कर दे या फ़र्स्ट क्लास में सफ़र करे और साथ में एक, साधारण सा कंबल बिस्तरे के रूप में रखने की रियाकारी करे। मैंने यशपाल को इस अहं के बावजूद कि उन्हें किसी दूसरे कथाकार की चीज़ अपने मुक़ाबले में अच्छी नहीं लगती, खुले स्वभाव और सरल प्रकृति का पाया है। अल्मोड़ा में डेढ़ महीने के प्रवास में याद रखने वाली चीज़ यशपाल का संसर्ग है शेष अनुभव तो ख़ासे कटु हैं।[6]

मैंने अल्मोड़ा में यशपाल का उपन्यास 'मनुष्य के रूप' पढ़ा और अल्मोड़ा से आकर 'दिव्या' और 'देशद्रोही' देखे। 'मनुष्य के रूप' और 'दिव्या' में मुझे कुछ स्थल बहुत अच्छे लगे। जहाँ तक उपन्यास की कला का संबंध है (क्योंकि ये उपन्यास कथानक प्रधान है) मुझे उनकी कला में अनावश्यक नाटकीयता लगी। 'दिव्या' तो यशपाल ने निश्चय ही सिनेमा को ध्यान में रख कर लिखा है। उसका अंत सिनेमा के पर्दे पर बड़ा प्रभावोत्पादक हो सकता है। तनिक और सावधानी से यशपाल दिव्या' से ऐसे दोष निकाल सकते थे। यही बात 'मनुष्य के रूप' के बारे में कही जा सकती है। इसी कारण उपन्यासों में अस्वाभाविकता का दोष आ गया है। इन दोनों की तुलना में जहाँ तक कथानक के गठन का संबंध है मुझे यशपाल के शेष उपन्यासों में से 'पार्टी कामरेड' को छोड़ कर 'देशद्रोही' अच्छा लगा। कहानी 'देशद्रोही' की भी यथार्थ नहीं, यशपाल के अधिकांश उपन्यासों की भांति काल्पनिक है। इस दृष्टि से यशपाल यथार्थवादी लेखक हैं भी नहीं, लेकिन वह संभाव्य (Probable) तो है। 'मनुष्य के रूप' और 'दिव्या' में यह संभाव्यता कई जगह नहीं रहती। यशपाल की यथार्थवादिता उनके कथानाक अथवा पात्रों के चरित्र-चित्रण में नहीं, उन कथाओं अथवा चरित्रों द्वारा प्रस्तुत किए गए आधारभूत सत्यों में रहती है। आधारभूत सत्यों को बोकर वे उन पर अपनी कल्पना से कहानी अथवा उपन्यास का महल खड़ा कर देते हैं। यशपाल द्वारा किया गया सत्य का निरूपण किसी को अच्छा लगे या न लगे, पर उसकी सत्यता से प्रायः इनकार नहीं किया जा सकता। यद्यपि कई जगह उसके दर्शाने की आवश्यकता, जैसे उनकी कहानी 'प्रतिष्ठा का बोझ' में मेरी समझ में नहीं आई।

अल्मोड़ा से आने के बाद कार्यवश मुझे दो-एक बार लखनऊ जाना पड़ा और पहाड़ी प्रदेश में उन्मुक्त सैर-सपाटा करने वाले यशपाल को मैंने मशीनों और गुफ़ों से जुटे अनवरत काम करते देखा। यशपाल ने प्रिंटिंग मशीन लगा रखी है और उन्हें इस फ़न में काफ़ी महारत हो गई है। मशीन का अपना यह ज्ञान उन्हें प्रिय भी है, इसका उन्हें गर्व भी है और वे कहा करते हैं कि मशीन के हर मूड को वे अपनी संगिनी के मनोभावों (मूड्ज़) की भांति जानते हैं (यद्यपि कोई संगी अपनी संगिनि के, अथवा संगिनि संगी के मनोभावों को पूरी तरह जान सकती है–यह कहना कठिन है।) ऊपर तीसरी मंज़िल पर अपने कमरे में बैठे वे नीचे मशीन की आवाज़ सुन कर ही समझ जाते हैं कि उसे क्या तकलीफ़ है। फिर दफ़्तर का काम करते, प्रूफ़ पढ़ते, मशीन दुरुस्त करते मैंने उन्हें किसी प्रकार की सुस्ती दिखाते नहीं पाया। एक रात वे साढ़े ग्यारह बजे तक प्रूफ निकालने वाली छोटी सी दस्ती मशीन ठीक करते रहे और जब वह ठीक प्रूफ़ निकालने लगी तो थकावट के बावजूद हर्ष से उनका चेहरा खिल गया और वे दुर्गा भाभी के यहाँ अपने कमरे में सोने चले गए और उनकी पत्नी न जाने कब तक बैठी प्रूफ़ निकालती रहीं।

बहुत सी बातें भाभी (रानी पाल) और यशपाल में मिलती हैं, लेकिन शायद भाभी में अहं, गांभीर्य और काम करने की शक्ति यशपाल की अपेक्षा अधिक है। मैंने सुबह उठते ही उन्हें काम में जुटे पाया और फिर उसी निष्ठा से दिनभर काम करते रह गई। रात तक अनथक उसी में विरत देखा। इस पर भी मैंने उन्हें झुँझलाते, चिड़चिड़ाते या खीझते नहीं पाया। नदी जैसे अनायास कंकर पत्थरों और

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 2, Issue 1, January 2015

गड्ढों के ऊपर बहती चली जाती है, मैंने उन्हें दैनिक कार्यक्रम की ऊबड़-खाबड़ता पर धैर्य से बहते देखा है। वे खाना खाने आई हैं कि नीचे से पुकार आई, वे चली गईं, फिर कुछ देर बाद आकर खाने लगीं। वे बैठी प्रूफ़ पढ़ रही हैं कि कोई आदमी मिलने आ गया, किसी बात पर वाद-विवाद हुआ यह चला गया तो बिना माथे पर बल डाले प्रूफ़ पढ़ने लगीं।

यशपाल के एक मित्र ने मेरी पत्नी को परामर्श दिया था कि लखनऊ जाएँ तो रानी पाल से अवश्य मिलें, आपको प्रेरणा मिलेगी। कौशल्या स्वयं काम करने वाली है, पर इसमें संदेह नहीं कि भाभी के काम और विश्वास को देखकर उसे प्रेरणा मिली। मुझे तो यशपाल के जीवन को देखकर महाकवि ठाकुर के नाटक 'चित्रा' की अंतिम पंक्तियाँ याद आ गईं। चित्रा जैसा आत्म-विश्वास दिलेरी और अपने संगी के साथ जीवन के ऊबड़-खाबड़ पथ पर सुख और संकट में पग से पग मिला कर चलने की मायना उनमें है। ऐसी संगिनी को पाकर अर्जुन की भाँति कौन संगी न कह उठेगा– 'Beloved my life is full'

संदर्भ

1. पुस्तक : अतीत के चलचित्र, प्रकाशन : भारती भंडार,संस्करण : 1941
2. यशपाल के निबन्ध
3. विप्लव प्रकाशन
4. यशपाल के पत्र (गूगल पुस्तक)
5. क्रान्ति का अलख जगाने वाले लेखक थे यशपल[मृत कड़ियाँ]
6. यशपाल. सिंहावलोकन-1 (1956 संस्करण). पृ॰ 42.